द्वितीय अध्याय

समस्याओंका स्वरूप।

अध्याय क्र. २

समस्याओंका स्वरूप

मानव आज जिस युग में से गुजर रहा है, उसे किसी युग की संज्ञा दी जाये, बुध्दि की दौड़ से परे हैं, फिर भी गहन चिन्तन और मनन से इसी निष्कर्ष पर पहुँच जाता है कि इसे विज्ञान, राकेट आदि की अपेक्षा समस्या युग की संज्ञा देना कही अधिक समीचीन होगा। विज्ञान भी आज अपने विशिष्ट गुणों के कारण युध्द, विनाश व संहार की समस्या से युक्त हो गया है। साहित्य चूँकि समाज का प्रतिफलम और मानव प्रतीत होता है अत: हिन्दी साहित्य का इतिहास इनसे फिर अछूता कैसे रह सकता था। मानव के रूदन ने साहित्य को भी द्रवीभूत कर दिया। प्रसाद की घनीभूत पीडा, आँसू के रूप में यदि फूटी तो महादेवी के विरह ने विरह गीतों की झड़ी लगा दी। प्रेमचंद के सहज पसीजनेवाले मानव हृदय ने उसे और उसके साहित्य को मानवता के इतना समीप ला दिया कि फिर यह सोचना भी दुष्कर हो गया कि इतने अटूट स्नेह की उपलब्धि होने पर भी कालान्तर में उसे एक मीठी फटकार एवं अवहेलना मिलेगी।

मानव अपना इतना विस्तृत साम्राज्य फैला चुका है। उसने कितने ही अनगिनत अपरिचित रहस्यों को खोजने की कोशिश की है फिर भी इतने बडे विस्तृत और बुध्दिमान मानव जीवन को समस्या जैसे छोटे से शब्द ने बांध लिया है। उसकी कठोर कारा की सुदृढ़ प्राचीरों को तोड़कर वह एक पग भी बाहर नहीं निकाल पा रहा। आखिर निकाले भी कैसे, जीवन का कोई भी तो कोना ऐसा नहीं जहाँ आज समस्याओं का स्वेच्छाचारी शासन न हो। इसे परितृप्त करने के लिए न जाने कितनी मासूम आत्माओं को अपनी आहुति देनी पड़ी है, इसकी दावाग्नि ने वस्तुत: इसे आहुति ही माना और अपनी लपटो को पहले से भी अधिक विस्तार दे दिया। समस्याओं के इस विस्तार ने सहहितेनकी भावना से युक्त साहित्य को भी समस्याओं में जकड़ लिया है। यह वैभव संम्पन्न "समस्या" शब्द आखिर है क्या, यह जिज्ञासा निरन्तर बढ़ती जा रही है, अत: इसका स्पष्टीकरण होना ही चाहिए।

समस्या से तात्पर्य/समस्या का अर्थ :-

"चित्रकाव्य के सात भेदों में से "समस्या" भी एक है, इसका लक्षण निरूपित करते हुए पुराणकार ने कहा है -

"सुश्लिष्ट पद्य में कं यन्नानाश्लोकोश निर्मितम्
सा समस्या परस्या...त्यपस्यो: कृति संकरात"[१२]

"संस्कृताचार्यों ने समस्या का केवल यही अर्थ लगाया है कि "समस्या" वह है, जिसमें अपनी एवम् दूसरे की रचना का संगठन अथवा समन्वय हुआ हो, किन्तु आधुनिक युग में समस्या का स्वरूप परिवर्तित होता गया और अब इसका अर्थ केवल कठिन वस्तु से लिया गया प्रतीत होता है। पर साथ ही साथ किसी भी कठिण से कठिण प्रश्न का उत्तर संभव एवं असम्भव सभी प्रकार के व्यापार के माध्य से दे देना भी लक्ष्य रहा है। भाषा शब्द कोशकार ने समस्या का अर्थ कठिन या जटिल प्रश्न, गूढ़ या गहन बात, उलझन, कठिन प्रसंग, किसी पद्य का अतिमांश जिसके आधार पर पूर्व पद्य रचा जाता है, संघटन, मिश्रण, मिलाने का भाव या क्रिया लिया है। करूणापति त्रिपाठी ने भी कठिन अवसर या प्रसंग के ही अर्थ में इसे स्वीकार किया है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि समस्या आज एक कठिण उलझन के सिवाय और कुछ नहीं। पर मानव इस उलझन की सुलझन मे इस तरह उलझ गया है कि सुलझन को पाने के लिये हाथ-पाँव हिलाने पर भी इसके हाथ में सिवाय उलझन के कुछ भी नहीं आ रहा है। समस्याओं का स्वरूप आज मकड़ी के उस जाल सदृश्य लग गया है जो देखने में तो अलग अलग तन्तुवाय ही दिखाई देते है परन्तु एक दूसरे इस तरह निगुन्थित है कि उन्हें अलग किया ही नहीं जा सकता। जीवन की जटिलताएँ, कठिनाइयाँ और समस्याएँ उसकी चित्तवृत्तियों के विकास के साथ साथ निरन्तर बढ़ती चली जा रही है। मनुष्य इच्छाओ का दास है और इच्छाएँ सदैव अतृप्त रहती है, यहीं अतृप्ति

---

१२. अग्निपुराण अ. ३४३/३१ : डॉ. विमल भार्कर : हिन्दी में समस्या साहित्य, पृ. ९ से उद्धृत, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा।

कालान्तर में जीवन में समस्याओं का जाल सा फैला देती है। आज के युग में तो समस्याएँ जीवन के लिए इतनी बढ़ गई है कि उनके कारण जीवन स्वयं एक समस्या हो गया।"[१३]

समस्या साहित्य की विशेषताएँ एवं उद्देश्य ::-

आज का साहित्य अनेक धाराओं से बहता प्रवाहमान होते होते आगे बढ़ने लगा है। उसी प्रकार आज का साहित्यकार भी जहाँ एक ओर अपने साहित्यकार के दायित्व के प्रति जागरूक है, व्यक्ति और राष्ट्र की प्रगति की आकांक्षा से प्रेरित हो विभिन्न विचार-संघर्षों का वारिस बन, समाज के सदस्य के रूप में साहित्यकार के अनिवार्य सम्बन्ध की भूमिका को स्वीकारते हुए, राष्ट्र-निर्माण की व्यापक राष्ट्रीय चेतना के साहित्य सृजन की समस्याओं से उलझा है। किसी ने कहाँ भी है कि जहाँ न पहुँचे रवि, तहाँ पहुँचे कवि" के अनुसार साहित्यकार "देश और समाज की बदलती हुई स्थितियों मे संक्रान्तियुगीन सम्भावित जघन्यता, भ्रष्टाचार, बेईमानी, स्वार्थ लोलुपता, घोर व्यक्तिवादिता, अहं, कुण्ठाओ, काम अतृप्तियो और खंडित व्यक्तित्ववाले मानव समूहों के बीच जीवन के नये मान-मूल्यों, नये नैतिक मानों, आस्था के नये स्तंभो, विश्वास के नये आधारों तथा देश और मानवता को नई भव्यता, सुन्दरता और संपन्नता प्रदान करने के लिए आकुल और प्रयत्नवान, दृढ़, आस्थावान, विश्वासी, मानवीय चरित्रो के गढ़ने में संलग्न है।"[१४]

अच्छा साहित्यकार स्त्रष्टा और दृष्टा दोनों का काम करता है। साहित्यकार और कवि जीवन के शुल्क इतिवृत्ति से उसे याने मानव को निकालकर सरसता का स्त्रोता प्रवक्ति के लिए समसामायिक समस्याओं का चित्रण सदैव करता ही रहा है। एक जागरूक मानवतावादी कलाकार की आत्मा इसी समसामायिकता व युगीनता में निवास करता है न कि वादीयता में। साहित्यकार वस्तुत: समाज की ईकाई होता है इस नाते उसका

---

१३. डॉ. विमल भास्कर : हिन्दी में समस्या साहित्य, पृ. ९-१० : जवाहर पुस्तकालय, मथुरा।

१४. डॉ. रामगोपाल सिंह चौहान : आधुनिक हिन्दी साहित्य [१९४७-६२] : पृ. ३० : विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

यह कर्तव्य हो जाता है कि वह अपने युग की राष्ट्रीय, जातीय और अन्य सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं की ओर से उदासीन न हो प्रत्युत उन्हें उभार कर सबके सम्मुख रखे। उनके उपर्युक्त निदानों की ओर संकेत कर समाज एवं देश को एक स्वस्थ दिशा दे, यही उसका उद्देश्य है। इस संदर्भ मे मोहन राकेश का कथन अत्यंत द्रष्टव्य है -

"साहित्य-रचना केवल फालतू समय मे किया जानेवाला कर्म नहीं। अन्यान्य कलाओं की तरह इसके लिए भी व्यक्ति के पुरे समय और व्यक्तित्व का समर्पण आवश्यक है। केवल प्रतिभा ही एक लेखक का निर्माण नहीं करती। प्रतिभा एक बन्द कैमरे के लैन्स की तरह है। सही अर्थ मे उसका उपयोग करने के लिए उसे जीवन के क्षेत्र में ले जाना आवश्यक है। इसी तरह लेखक के लिए रचना ही साधना नहीं, जीवन भी साधना है और इस साधना को स्वीकार करके ही वह अपने व्यक्तित्व की रक्षा कर सकता है॥[१५]

साहित्य क्या है ? इसके संबंध में रामरत्न भटनागर कहते हैं - "लोक और व्यक्ति के जीवन की शब्दगत अभिव्यक्ति ही साहित्य है।"[१६]

जीवन का साहित्य से और साहित्य का साहित्यिकार से अनन्य साधारण संबंध होता है। साहित्यकार समाज में रहता है समाज में जो भी अच्छी-बूरी बातें घटित होती है, उस का असर साहित्यकार पर पड़ता है इसका प्रतिफलन ही साहित्य है॥ अत: स्पष्ट है कि साहित्य जीवन का दर्पण होता है। जीवन जीते हुये मनुष्य को अनेकानेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। संक्षेप में हम यह भी कह सकते है कि समस्या साहित्यकार का उद्देश्य है। मानव को समस्याओं और रूढ़ियों की काल रात्रि से निकाल कर, नैतिकता का इतना बल भर दें कि भयंकर से भयंकर तूफानों मध्य भी उसकी नौका कही डगमगाये नही। समस्याओं के समाधान को इस रूप में प्रस्तुत करे की वे शुगर कोटेन हों। साधारण मानव को वैसे तो उसकी सिर्फ अच्छाई ही अच्छाई दिखाई दे। कुण्ठाओं से ग्रस्त इस जीवन में थी एक नई चेतना- नया आत्मबल और

---

१५. मोहन राकेश : साहित्यकार की समस्याएँ:पृ. २२४:प्रकाशन समाचार: जनवरी, १९५९।

१६. रामरत्न भटनागर : समसामायिक जीवन और साहित्य : पृ. ८८॥

नया दाढस भरना है मानव-जाति की जरूरतों और हितों को ध्यान में रखते हुये युगानुरूप औस समसामायिकता को लक्ष्य मानकर ऐसे साहित्य का निर्माण करना उसका उद्देश्य होना चाहिए जो मानवता की बुराइयों को तराश कर जीवन की क्षुद्रताओं और संकीर्णताओं से उपर उठाकर मानवता के उस वास्तविक धरातलपर लाकर प्रस्तुत करें, जहाँ उसे आगे बढ़ने में सतत प्रेरणा मिले और वह समस्याओं का हल करता हुआ विजित मानव बनकर राष्ट्र एवं समाज की समस्याओं का चित्रण, समाधान ही उसका लक्ष्य होना चाहिए।

प्राचीन मानव अशान्ति के युग से गुजर रहा था किंतु तब भी उनकी अपनी अपनी युगानुरूप अलग अलग प्रकार की समस्याएँ थी। आज अणु और एटम् जैसे विस्फोटक तत्व प्रकाश में आ गये है। आज का मानव अशान्ति के युग से गुजर रहा है, जिसमें चारो ओर से भयानक बमो की विस्फोटक ध्वनि और उत्तेजना है। इन विशेषताओं ने न केवल जीवन को ही पूर्णता प्रभावित किया अपितु जीवन से संबंधित साहित्य को भी पुर्णता प्रभावित किया है। अत: इसका मूल स्वर रुढि विध्वंसक है और समसामायिक जीवन के यथार्थ से स्फुट एक या अनेक समस्याओंपर बौध्दिक वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक ढंग से विचार करना है। समस्या साहित्य आशा और निराशा का, सुख और दु:ख का, हास्य और रूदन का संगम स्थल है और इसका उपजीव्य है। समस्या, विडम्बना, रुढिबध्दता एवं अनास्था। यह न केवल समस्या साहित्य की विशेषताएँ है बल्कि आज के आधुनिक समसामायिक समूचे साहित्य की भी यही विशेषताएँ है।

"वास्तव में वर्तमान वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति के फलस्वरूप निर्मित मानव-मन और परिवर्तित भाव-बोध तथा युग बोध का ऐतिहासिक परम्परा के साथ समन्वय स्थापित कर जीवन के नये क्षितिज स्पर्श करना ही "आधुनिकता" है। वह मानव के नये "अध्यात्म" की खोज है। "आधुनिकता" कोई ओढी हुई या लादी हुई चीज नहीं है। वह जीवन की गहराई नापने का मानव-सापेक्ष दृष्टिकोण है। वह दृष्टि-सापेक्ष है। आधुनिक युगकी जटिल मन:स्थिति और परिवेश को पकड़ पाना ही "आधुनिक युगबोध" है।"[१७]

---

१७. डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय : द्वितीय महायुध्दोत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास : पृ. ३४ : राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली।

इस बदले हुये आधुनिक युग ने अनेकानेक नयी नयी समस्याओं को जन्म दिया है - जैसे - मन की रहस्यपूर्ण गुत्थियों को सुलझाना, स्वतंत्र व्यक्तित्व से उत्पन्न नारी समस्या, पुरुष-नारी संबंध की नयी कल्पना तथा तलाक समस्या, राज्यों का विलीनीकरण कर जनवादी शासन व्यवस्था की स्थापना, जमींदारी प्रथा का अन्त कर किसानों को अपने खेतों का मालिक बनाना, छुआ-छूत को गैर कानूनी कर वर्ण-वैषम्य को दूर करना, बालिग मताधिकार, तलाक बिल, कोड़बिल और दहेज बिल के द्वारा नारी को समाज में सम्मानित और आर्थिक बराबरी का स्थान दिलाने का प्रयास करना, पूँजीपतियों के शोषण से मजदूरों की रक्षा करने के कानून बनाना, व्यक्तिगत पूँजी के समानान्तर सार्वजनिक पूँजी के उद्योगों की स्थापना, अनेक उद्योगों और आर्थिक संस्थानों का राष्ट्रीयकरण कर पूँजीपतियों के प्रभुत्व को कम करना, पंचवार्षिक योजनाओं द्वारा देश का सर्वतोमुखी विकास कर राष्ट्र को आर्थिक दृष्टि से संपन्न और आत्म-निर्भर बनाने का प्रयास करना आदि समाजवादी समाज व्यवस्था की दृष्टिकोण से संम्बधित जितनी भी समस्याएँ है प्राय: उन सभी समस्याओं का चित्रण हमें आधुनिक हिन्दी साहित्य में देखने को मिलता है।

आज के इस आधुनिक युग में अनेकानेक कथा-साहित्यकार उत्पन्न हुये हैं। उन्होंने अपने साहित्य में प्रस्थापित आधुनिक समस्या का ही चित्रण किया है। आधुनिक कथा लेखिकाओं के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुये श्री सुरेंन्द्र कहते हैं - "आधुनिक लेखिकाओं के सृजन में प्रामाणिक जीवनानुभवों की अनुगूँज और अनुभवो के अलग अलग स्तरो का वैविध्य उन्हें अग्रिम दस्ते के कथाकारों से जोड़ता है ... संस्थितियो और विचार बिन्दुओं को बदले हुये कोण से छूने में उन्होने न सिर्फ परहेजों को तोड़कर और कथा कहने के चालू मुहावरे का अतिक्रमण कर अपनी प्रबुध्दता की मिसाल कायम की है, बल्कि कथागत उपलब्धियो में उन्होने अपनी कथात्मक क्षमता का भी अहसास कराया है।"[१८]

तो आज की कहानी के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुये राजेंद्र यादवजी कहते है -

---

१८. श्री. सुरेंन्द्र : नई कहानी : प्रकृति और पाठ : पृ. ३१ :
परिवेश प्रकाशन, जयपुर।

" आज की कहानी हमें दो रूपों में बँटी दिखायी देती है - एक में मनुष्य की घुटन, पराजय, पलायन, हार, अनियंत्रित और स्वच्छंद वृत्तियों की वकालत, या मात्र चित्रण होता है, तो दूसरे में मनुष्य के स्वस्थ और शुभ के प्रति, उसकी जिजीविषा के के प्रति आस्था प्रकट होती है। ... आज एक ही कहानीकार में कही कही अनेक प्रकार की प्रवृत्तियाँ मुखर होती है - कही वह बेहद निराशवादी, पराजित और विकृत [मौरबिड] दिखाई देता है तो कहीं बहुत स्वस्थ और आशावादी। ... दूसरी प्रकार की प्रवृत्तियों वाले कहानीकारों ने मनुष्य की स्वस्थ और शुभ नैतिकता को दोनों रूपों में वाणी दी है, एक ओर सामाजिक यथार्थ के अनेक बिखरे संदर्भों को व्यक्ति के धरातलपर रेखांकित करने में और दूसरी ओर असामाजिक यथार्थ का अतिरंजित मखौल उड़ाने में।"[१९] दूसरे प्रकार के कहानिकार मे मन्नूजी का समावेश हो सकता है।

"साहित्यकार अपने युग और परीस्थितियों से प्रभावित हों, ऐसे साहित्य का निर्माण करता है जो एक ओर युग की प्रतिध्वनि हो और दूसरी ओर उसमें वह सामर्थ्य हो जो अपना प्रभाव डालने के बाद प्रतिक्रिया स्वरूप उठी हुई ज्वालाओं से किसी भी प्रकार टूक-टूक न होने पाये। स्वतंत्रता से पूर्व का लिखा हुआ समस्याओं युक्त उपन्यास साहित्य ऐसा ही था।

स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास साहित्य तो इस दृष्टि से अनेको कदम और भी आगे बढ़ गया है। व्यक्ति समाज और युग की समस्याओं को प्रच्छन्न नहीं अपितु सीधे रूपसे लिया जाने लगा। इसका कारण है उपन्यास स्वयं। आज वह स्वयं समस्यामय युग से गुजर रहा है। अतः उस युग की समस्याओं को लेना उसके लिए अनिवार्य हो गया है, भले ही वह उसका अंशिक रूप चित्रित करें या भव्य एवं विशाल। जिन कथानकों का निर्माण आज हो रहा है या हो चुका है उसमें प्रमुख पात्र जहाँ आपबीती सुनाने का प्रयास करता है वहाँ वह अपने अतहत के विश्लेषण के व्दारा अपनी वर्तमान समस्याओं में कार्य करण के सूत्र ढूँढता जाता है।"[२०]

---

१९. राजेन्द्र यादव : कहानी : स्वरूप और संवेदना : पृ. ८७, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली।

२०. डॉ. विमला भास्कर : हिन्दी मे समस्या साहित्य : पृ. ११९ : जवाहर पुस्तकालय, मथुरा।

जाति-पाँति की समस्या को लेकर लिखे गये उपन्यास यह सिध्द करने पर तुले है कि इससे राष्ट्र की गति कैसे रुक जाती है। उत्कोच, छुआछूत, अनमेल विवाह, बेकारी आदि समस्याएँ राष्ट्र के लिये किस प्रकार घातक हैं इनका ज्ञान मानव को उपन्यास पढ़कर कही अधिक होता हैं क्योंकि इससे वह बनते बिगड़ते समाज, राष्ट्र की तस्वीर आँखो से देख लेता है। राष्ट्रीय प्रगति धीमी हैं इसके कई कारण उपन्यासों में बतलाये गये है।

"सबसे पहला कारण तो सत्तारूढ दल कॉंग्रेस की आपसी फूट और गुटबाजी, स्वतंत्रता से प्राप्त सुख-सुविधा के उपयोग की बढ़ती हुई प्रवृत्ति , राष्ट्रहित के सम्मुख अपने निजी स्वार्थों को प्रश्रय देने की मनोवृत्ति, कॉंग्रेस संगठन में फैली कुनबापरस्ती और भाई-बन्दी तथा विचार धाराओं का आपसी अन्तर्विरोध है। इस स्थिति ने बढ़कर राष्ट्रीय संकट और समस्या की गंभीरता का रूप ग्रहण कर लिया है। इस स्थिति के कारण राष्ट्रीय लक्ष्य और राष्ट्रीय हित के कार्यों तथा देश की प्रगति के कार्यों की ही उपेक्षा नहीं हुई, उनकी विकास गति ही धीमी नहीं हुई, बल्कि सारे प्रशासन में ही ढीलापन आया है, भ्रष्टाचार बढ़ा है और सारे राष्ट्र के नैतिक स्तर पर भी इसका असर पड़ा है। स्वतंत्रता से पूर्व सारा राष्ट्र कॉंग्रेस को अपनी राष्ट्रीय संस्था स्वीकार कर उसके पीछे संगठित था। आज राष्ट्र उसे अपनी एकमात्र राष्ट्रीय संस्था स्वीकार नही कर पा रहा है। उसके प्रति जनता का स्वतंत्रता से पूर्व जैसा विश्वास भी कम होता जा रहा है। जनता के मन में आशंका ने घर करना आरम्भ कर दिया है कि कांग्रेस उसके सुखी-संपन्न जीवन के लक्ष्य को पूरा नही कर पायेगी। कॉंग्रेस एक उदार संस्था है, जिसमें हर विचार और हर वर्ग के व्यक्ति शामिल हैं, जिसके कारण कांग्रेस में हितों और विचारधाराओं का टकराव निरन्तर चलता रहता है जो गुटबाजी और प्रभुत्व स्थापन के लिए शक्ति सन्तुलन और छल-प्रपंच जैसी प्रवृत्तियों का जन्म देता है। इसका प्रभाव राष्ट्रीय लक्ष्य और तत्सम्बन्धी नीतियो की एक-रूपता पर पड़ता है। इसीलिए यद्यपि वर्गहीन शोषण मुक्त समाजवादी समाज का राष्ट्रीय लक्ष्य स्वीकार किया गया, लेकिन उसकी स्थापना की कार्यविधि और उसके स्वरूप के सम्बन्ध में भी अनेक रूपता और

और मतवैभिन्य दिखाई पड़ता है।"[२१]

इस प्रकार की राजनीतिक समस्या हमें मन्नूजी के "महाभोज" उपन्यास में दिखाई देती है।

समस्याओं के प्रकार :-

हरएक युग की अपनी समस्या होती है। युगानुरूप समस्याएँ तथा उनका स्वरूप भी बदलता रहता है।

१. राजनीतिक समस्या।
२. सामाजिक समस्या।
३. आर्थिक समस्या।
४. पारिवारिक समस्या।
५. वैवाहिक समस्या।
६. नारी समस्या।
७. मनोवैज्ञानिक समस्या।
८. बाल के मनोवैज्ञानिक समस्या।
९. घुटन और अकेलेपन की समस्या।

इस प्रकार की न जाने कितनी ही समस्याएँ हमें समाज में देखने को मिलती है। अत: मन्नूजी के कथात्मक साहित्य में हमें ये सारी समस्याएँ दिखाई देती है।

इन समस्याओं में से नारी समस्या को चुनना मेरा मुख्य उद्देश्य था चूँकि इस समस्या के साथ अन्य सारी समस्याएँ जुड़ी हुई है इसलिए मैने उसे अपने संशोधन ग्रंथ में ले लिया है।

हररोज का अखबार देखते ही प्राय: हर एक पृष्ठपर हमें ऐसी घटना पढ़ने को मिलती है जिसे पढ़कर मन में इस दकियानुसी समाज के प्रति घृणा उत्पन्न होती है। आज दहेज न मिलनेपर न जाने कितनी ही बेगुनाह और मासुम बहुओं को जला दिया जाता है।

---

२१. डॉ. रामगोपाल सिंह चौहान : आधुनिक हिन्दी साहित्य [१९४७-६२] : पृ. २१-२२ : विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

जिस व्यक्ति में इतना भी सामर्थ्य नहीं कि वह अपने मेहनत की कमाई से कुछ कर दिखाए ऐसे व्यक्ति को क्या हक है कि वह किसी के बेटीपर ऐसे अनन्वीत पशुसमान अत्याचार करे। इन सब बातों को पढ़कर ऐसा लगता है कि ऐसी निकृष्ट बातोंपर कही न कही अंकुश तो जरुर लगना चाहिए अन्यथा संपूर्ण समाजव्यवस्था ही नष्ट-भ्रष्ट हो जाएगी॥

ऐसी अवस्था में मन्नूजी जैसी भावुक लेखिका बिना प्रभावित हुये कैसे रह सकती है ? मन्नूजी जिस क्षेत्र में काम कर रही हैं उस समस्या में उन्होंने जितनी भी नारी अध्यापिकों को देखा है प्राय: उनकी समस्याओं को नजदीक से देखा है साथ ही साथ उन्हें जानने की कोशिश भी की है। मन्नूजी ने अध्यापन से संबंधित समस्याओं को नही लिया है तो जो नारी अध्यापिकाएँ है उनकी अपनी जो भी निजी समस्याएँ है उनको चित्रित किया है॥

मन्नूजी के साहित्य में चित्रित समस्याएँ :-

उपर्युक्त उद्धृत सभी समस्याओं का निराकरण मन्नूजी के कथात्मक साहित्य में आ गया है। किंतु मन्नूजी ने वेश्या विवाह एवं विधवा पुनर्विवाह समस्या का उल्लेख नहीं किया है। वैसे तो यें दो समस्याएँ असल में समस्याएँ हैं ही नहीं किंतु इस प्रकार का विवाह हो जाने के बाद समाज में उन्हें जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं वे भी उनकी अपनी समस्याएँ तो ही है। इसकी सविस्तर चर्चा हमने अध्याय क्र. चार में की है।

उपसंहार :-

इस प्रकार समस्याएँ तो बहुत है, जो जीवन से संबंधित है किंतु मन्नूजी ने खासकर उन्हीं समस्याओं को चुना है, जो नारी जीवन से संबंधित है॥

:: — ::